अध्याय 2 : शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रम के रूप में

1. वातावरण का अर्थ और उसकी प्रकृति

हमने देखा है कि कोई भी समुदाय या सामाजिक समूह खुद के नवीनीकरण की लगातार प्रक्रिया के जरिए ही अपने-आप को बनाए रखता है, और यह नवीनीकरण समूह के अपरिपक्व सदस्यों की शैक्षिक वृद्धि के माध्यम से होता है। विभिन्न संस्थाओं द्वारा अनजाने में और योजनाबद्ध तरीके से उस समूह के अनुभवहीन और प्रकट रूप से नए सदस्यों को अपने स्वयं के संसाधनों और आदर्शों के मजबूत संरक्षक के रूप में बदलता है। इस तरह से शिक्षा प्रोत्साहित करने, पोषण करने, और विकसित करने की एक प्रक्रिया है। इन सभी शब्दों का तात्पर्य है कि इस प्रक्रिया में विकास की परिस्थितियों पर ध्यान देना आवश्यक तौर पर शामिल है। आमतौर पर हम पालन-पोषण करने, बड़ा करने, विकसित करने की भी बात करते हैं और ये सारे शब्द उस स्तर के अन्तर को बताते हैं जिसे पाटना शिक्षा का उद्देश्य होता है। इस शब्द की व्युत्पत्ति को देखें तो 'शिक्षा' शब्द का अर्थ सिर्फ आगे लाने या पालन-पोषण की प्रक्रिया तक सीमित है। जब हमारे दिमाग में इस प्रक्रिया के नतीजों की बात होती है, तब हम शिक्षा को सामाजिक क्रियाकलाप को नियत आकार देने वाली, निर्माण करने वाली, और ढालने वाली गतिविधि के तौर पर देख रहे होते हैं। इस अध्याय में हम उस तरीके की सामान्य विशेषताओं पर ध्यान देंगे जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह अपने अपरिपक्व सदस्यों को अपने सामाजिक रूप में लाते हैं।

चूँकि इसके लिए अनुभव की गुणवत्ता में होने वाला एक बदलाव जरूरी है, जब तक कि यह सामाजिक समूह के मौजूदा हितों, उद्देश्यों, और विचारों के अनुकूल नहीं हो जाता है। इसलिए जाहिर तौर पर यह समस्या केवल भौतिक रूप से बदलाव की नहीं है। वस्तुओं को भौतिक रूप से एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सकता है; उनका शारीरिक रूप से व्यक्त करना भी सम्भव हो सकता है। परन्तु विश्वासों और आकांक्षाओं का भौतिक तौर पर निष्कासन एवं प्रवेशन नहीं हो सकता, तब आखिर किस तरह से इन्हें सम्प्रेषित किया जाता है? चूँकि इन्हें सीधे-सीधे स्थानान्तरित करना और शब्दश: मन में बैठाना

सम्भव नहीं है, इसलिए हमारी समस्या उस विधि का पता लगाने की है जिसके माध्यम से नए सदस्य अनुभवी सदस्यों के दृष्टिकोण को अपनाते रहते हैं, या अनुभवी सदस्य नए सदस्यों को अपने ही समान तैयार करते हैं। इसका जवाब सामान्य तौर पर यह है : वातावरण की गतिविधियों के कारण कुछ प्रतिक्रियाओं को बाहर लाकर। आवश्यक विश्वासों को लगातार दोहराकर दिमाग में बैठाया नहीं जा सकता है; न ही जरूरी नजरिए लोगों पर थोपे जा सकते हैं। बल्कि वह विशेष वातावरण ही, जिसमें कोई व्यक्ति रहता है, उसे अन्य परिस्थितियों की बजाय किसी विशेष वस्तु को देखने और महसूस करने की तरफ ले जाता है; यही वातावरण मनुष्य को निश्चित योजनाएँ बनाने की तरफ ले जाता है ताकि वह दूसरों के साथ सफलतापूर्वक क्रियाकलाप कर सके; यह दूसरों का समर्थन पाने की दिशा में उसकी कुछ मान्यताओं को मजबूत और कुछ को कमजोर करता है। इस तरह व्यक्ति में धीरे-धीरे व्यवहार का एक खास तरीका, क्रियाकलाप की एक विशेष प्रवृत्ति बनती जाती है। इस तरह 'वातावरण' अथवा 'माध्यम' किसी व्यक्ति को चारों ओर से घेरे रखने वाला परिवेश मात्र नहीं, बल्कि इससे कुछ अधिक है। वे अपनी सक्रिय प्रवृत्तियों से परिवेश की विशिष्ट निरन्तरता को निरूपित करते हैं। एक निर्जीव वस्तु निश्चित ही अपने परिवेश के साथ निरन्तर होती है; परन्तु केवल वातावरणीय परिस्थितियाँ ही वातावरण को नहीं बनाती हैं। उदाहरण के तौर पर अजैविक प्राणी उसपर असर डालने वाले कारकों के प्रति जागरूक नहीं होता है। दूसरी तरफ यह भी सम्भव है कि किसी जीवित प्राणी, मुख्यत: मनुष्य के लिए, स्थान और समय की दूरी पर स्थित कुछ वस्तुएँ इनके पास रहने वाली वस्तुओं से भी अर्थपूर्ण एक खास तरह के वातावरण का निर्माण कर सकती हों। वह चीजें जिनके द्वारा मनुष्य एक दूसरे से भिन्न होते हैं वही उनका वास्तविक वातावरण है। अत: एक खगोलविद की गतिविधि उन सितारों, जिनका वह अवलोकन कर रहा है या जिनके विषय में वह गणना कर रहा है, के अनुसार बदलती रहती है। उसके तात्कालिक परिवेश में उसकी दूरबीन उसके पर्यावरण का सबसे आत्मीय हिस्सा है। उसी तरह एक पुरातत्ववेत्ता का पर्यावरण, एक पुरातत्ववेत्ता के रूप में, मानव जीवन के अतीत से जुड़े उन अवशेषों, अभिलेखों, आदि से बना होता है, जिनके जरिए वह उस समय के साथ सम्बन्ध जोड़ता है।

संक्षेप में, वातावरण उन परिस्थितियों से मिलकर बना होता है जो किसी भी जीवित प्राणी की मूलभूत गतिविधियों को बढ़ाती या रोकती, प्रोत्साहित या बाधित करती हैं।

किसी मछली के लिए पानी उसका वातावरण है क्योंकि वह उसकी जीवन की गतिविधियों के लिए आवश्यक है। किसी आर्कटिक खोजकर्ता के पर्यावरण में उत्तरी ध्रुव एक महत्त्वपूर्ण कारक है, चाहे वह वहाँ पहुँचने में सफल हो या नहीं, क्योंकि वह खोजकर्ता की सभी गतिविधियों को निर्धारित करता है और उन्हें विशिष्ट बना देता है। जीवन केवल निष्क्रिय रूप से अपना अस्तित्व मात्र बनाए रखना नहीं (यदि हम मान भी लें कि ऐसा हो सकता है), बल्कि सक्रिय होने का एक तरीका है। पर्यावरण या वातावरण इस क्रियाशीलता को बनाए रखने या निराश करने वाली परिस्थितियों के महत्त्व को बताता है।

2. सामाजिक वातावरण

एक प्राणी जिसकी गतिविधियाँ दूसरों के साथ सम्बन्धित होती हैं उसका एक सामाजिक वातावरण होता है। वह क्या करता है और क्या कर सकता है, यह दूसरों की उससे जुड़ी अपेक्षाओं, माँगों, सहमतियों, और निन्दा पर निर्भर करता है। ऐसे प्राणी जो दूसरे प्राणियों से जुड़े होते हैं वे दूसरों की गतिविधियों को ध्यान में रखे बगैर अपने क्रियाकलापों का संचालन नहीं कर सकते हैं। क्योंकि ये खुद की प्रवृत्तियों का बोध करने के लिए अनिवार्य शर्तें हैं। व्यक्ति जब कुछ करता है तो अन्य लोगों में हलचल करता है जैसे वे उसमें करते हैं। किसी व्यक्ति के पृथक क्रियाकलापों को समझने की कोशिश में हम एक व्यवसायी की कल्पना कर सकते हैं, जो खरीदने और बेचने का व्यवसाय करता है। एक निर्माता की गतिविधियाँ सही मायनों में समाज द्वारा निर्देशित होती हैं, तब जबकि वह अपने लेखाघर के निजी माहौल में योजनाएँ बना रहा होता है और तब भी जब वह निर्माण के लिए कच्चा माल खरीदता है या अपना तैयार माल बेच रहा होता है। उन क्रियाकलापों में सोचना और महसूस करना जो दूसरों के साथ जुड़े होते हैं, सामाजिक व्यवहार का ठीक वैसा ही तरीका है जितना कि प्रत्यक्ष रूप से सहयोग या प्रतिरोधी व्यवहार करना।

हम यहाँ पर मुख्यतः यह दिखाना चाहते हैं कि एक सामाजिक माध्यम किस तरह अपने अपरिपक्व सदस्यों का पालन-पोषण करता है। इसे देखने में अधिक कठिनाई नहीं है कि यह किस तरह से क्रियाकलाप की बाहरी आदतों को आकार देता है। कुत्ते और घोड़े जैसे जानवरों के क्रियाकलाप भी मनुष्यों के साथ सम्बन्धित होने की वजह से बदलते हैं;

उनकी अलग आदतें बनती हैं क्योंकि मनुष्यों का यह सरोकार होता है कि ये जानवर क्या करते हैं। मनुष्य जानवरों को प्रभावित करने वाली उनकी प्राकृतिक उत्तेजनाओं को नियंत्रित करके यानी एक खास तरह के वातावरण का निर्माण करके इन जानवरों को काबू में रखता है। भोजन, नकेल और लगाम, आवाजें, वाहनों का उपयोग उन तरीकों को दिशा देने में होता है जो घोड़े की प्राकृतिक या सहज प्रतिक्रियाओं को निर्धारित करते हैं। लगातार किन्हीं क्रियाकलापों को करते रहने से आदतें बन जाती हैं, जो ठीक उसी तरह काम करती हैं जैसे वास्तविक उत्प्रेरक करते हैं। यदि किसी चूहे को भूलभुलैया में रखा जाता है और उसे तयशुदा मोड़ निश्चित क्रम से पार करने पर ही भोजन मिलता है तो उसके इस क्रियाकलाप में धीरे-धीरे तब तक बदलाव होता है, जब तक कि यह गतिविधि भूख से सम्बन्धित न रहकर उसकी आदत में नहीं बदल जाती है।

मनुष्य की क्रियाओं में भी इसी तरह से बदलाव होता है। आग से जल चुका बच्चा आग से डरता है। यदि माता-पिता ऐसी व्यवस्था कर दें कि हर बार जब बच्चा किसी खास खिलौने को छुए और उसका हाथ जले; तब स्वाभाविक रूप से बच्चा उस खिलौने से भी दूर रहना सीख लेगा जैसे वह आग को छूने से दूर हटता है। हालाँकि, अब तक हम शैक्षिक गतिविधि से भिन्न, जिसे शायद प्रशिक्षण कहा जा सकता है, के बारे में बात कर रहे हैं। जिस तरह के बदलावों की बात की गई है वे बाहरी क्रियाकलाप के स्तर पर हैं न कि व्यवहार के मानसिक और भावनात्मक प्रवृत्ति के स्तर पर। हालाँकि यह अन्तर भी बहुत स्पष्ट नहीं है। यह सम्भावना है कि एक समय के बाद बच्चा केवल उस खिलौने से नहीं बल्कि उससे मिलते-जुलते सभी खिलौनों से घृणा करने लग जाए। हो सकता है कि उसकी यह घृणा तब भी बनी रहे जब वह वास्तविक जलने के अनुभव को भूल चुका हो; और सम्भव है कि वह अपनी इस बिना वजह के दिखने वाली घृणा को जायज ठहराने के लिए कोई कारण खोज ले। कुछ मामलों में, क्रियाशील उत्प्रेरक को प्रभावित करने के लिए वातावरण में बदलाव के जरिए बाहरी आदतों में फेरबदल करना उस क्रियाकलाप से सम्बन्धित मानसिक प्रवृत्ति में भी बदलाव ला सकता है। तो भी यह हमेशा नहीं होता है; किसी खतरनाक आघात से बचने के लिए प्रशिक्षित व्यक्ति इससे सम्बन्धित विचार या भावनाओं के बिना स्वचालित रूप से पैंतरेबाजी का उपयोग करता है। इसलिए, हमें प्रशिक्षण को शिक्षा से अलग करने के लिए कोई विशिष्ट चिह्न खोजना होगा।

एक संकेत इस तथ्य से मिल सकता है कि घोड़ा वास्तव में अपने द्वारा होने वाली गतिविधि के सामाजिक उद्देश्य को साझा नहीं करता है। घोड़े के क्रियाकलाप का उपयोग किसी दूसरे के द्वारा अपने लाभ के लिए होता है, और गतिविधि को करना घोड़े के लिए भी लाभदायक हो जाता है– इससे घोड़े को भोजन, आदि मिलता है। परन्तु घोड़े को, सम्भवतः, कोई नई रुचि नहीं मिलती है। उसकी दिलचस्पी केवल खाने में होती है, न कि अपने द्वारा किए जाने वाले काम के सम्पन्न होने में। वह साझी गतिविधि में हिस्सेदार नहीं होता है। किसी साझी गतिविधि में सहयोगी होने के लिए घोड़े की भी उस काम के पूरा होने में दूसरों जितनी ही रुचि होनी चाहिए। उसे उनके विचारों और भावनाओं को साझा करना होगा।

कई मामलों में– काफी अधिक मामलों में– यह देखा जा सकता है कि अपरिपक्व मानव को उपयोगी आदतें सिखाने के लिए उसके क्रियाकलापों का उपयोग किया जाता है। वह मनुष्य की तरह शिक्षित होने की बजाय जानवर के समान प्रशिक्षित होता है। उसकी मूल-प्रवृत्ति उसे तकलीफ या खुशी देने वाली वास्तविक वस्तु से जुड़ी होती है। परन्तु खुशी पाने या हार की तकलीफ को दूर रखने के लिए उसे इस तरह से काम करना होता है जिससे दूसरे भी सहमत हों। अन्य मामलों में, वह वास्तव में साझी गतिविधि में अपनी भागीदारी निभा रहा होता है। इस स्थिति में उसकी मूल आदतों में बदलाव आता है। वह न केवल दूसरों के क्रियाकलापों के अनुकूल खुद को ढाल रहा होता है, बल्कि इस प्रक्रिया में उसमें खुद भी वही भावनाएँ और विचार सक्रिय हो रहे होते हैं जो दूसरों को संचालित करते हैं। उदाहरण के लिए, एक आदिवासी कबीला योद्धाओं का कबीला है। वहाँ सफलता जिसके लिए प्रयत्न किया जाता है और उपलब्धियाँ जिन्हें सराहा जाता है; सभी युद्ध में लड़ने और उसमें जीत पाने से जुड़ी होती हैं। इस तरह का वातावरण एक बच्चे में पहले खेल के दौरान और फिर उसके पर्याप्त ताकतवर होने के बाद आगे भी आक्रामक भावना को भड़काता है। जब वह लड़ता है तो उसे सहमति और समर्थन मिलता है; जबकि पीछे हटने की कोशिश करने पर उसे नापसन्द किया जाता है, मजाक बनाया जाता है या अनुकूल पहचान नहीं मिल पाती। तो यह स्वाभाविक है कि उसमें अन्य प्रवृत्तियों और भावनाओं की बजाय लड़ाकूपन से जुड़ी प्रवृत्तियाँ और भावनाएँ अधिक मजबूत होती हैं और उसके विचार युद्ध से जुड़ी वस्तुओं की तरफ मुड़ जाते हैं। केवल इसी तरीके से वह

अपने समूह का एक पूर्णत: स्वीकृत सदस्य बन सकता है। इस तरह से धीरे-धीरे उसकी मानसिक आदतें उसके समूह के अन्य सदस्यों की तरह बनती चली जाती हैं।

यदि हम इस उदाहरण में मौजूद सिद्धान्त को देखें तो हम देख पाएँगे कि सामाजिक वातावरण न तो किन्हीं इच्छाओं और विचार को सीधे तौर पर आरोपित करता है; और न ही यह 'सहज रूप से' पलक झपकने या चोट से बचने की कोशिश की तरह केवल माँसपेशियों के क्रियाकलाप की आदत को विकसित करता है। ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना, जो किन्हीं वास्तविक और प्रत्यक्ष कार्यों को बढ़ावा देती हैं, इसकी पहली अवस्था है। व्यक्ति को किसी साझी गतिविधि में भागीदार बनाना ताकि वह उसकी सफलता को अपनी सफलता और उसकी असफलता को अपनी असफलता की तरह देख पाए, इसका पूर्णता देने वाला कदम है। ज्यों ही व्यक्ति अपने समूह के भावनात्मक रवैए को अपनाता है वह उन खास परिणामों, जो कि समूह का लक्ष्य होते हैं, और उनमें सफलता पाने के तरीकों को पहचानने के प्रति सचेत होता जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो उसकी मान्यताएँ और विचार समूह के अन्य सदस्यों की तरह होते जाते हैं। वह भी अपने समूह के ज्ञान भण्डार के समान ही ज्ञान प्राप्त करता है, क्योंकि ज्ञान भी उसकी स्वाभाविक तलाश का एक हिस्सा है।

ज्ञान प्राप्त करने में भाषा का महत्त्व सन्देह से परे है; इसी कारण से यह सामान्य धारणा बना ली जाती है कि ज्ञान को एक से दूसरे व्यक्ति में सीधे ही भेजा जा सकता है। लगभग ऐसा लगता है कि किसी विचार को दूसरे के मस्तिष्क तक पहुँचाने के लिए हमें उस तक केवल आवाज को पहुँचाने का काम ही करना होगा। इस तरह ज्ञान प्रदान करना केवल एक भौतिक प्रक्रिया से जुड़कर रह जाता है। परन्तु विश्लेषण करने से पाया जाएगा कि भाषा से सीखना भी उसी नियम की पुष्टि करता है जिसके बारे में पहले कहा गया है। बिना संकोच के साथ यह माना जा सकता है कि एक बच्चा 'टोपी' (hat) के बारे में तब समझता है, जब वह खुद को दूसरों की तरह से टोपी का इस्तेमाल करते अर्थात अपने सिर को उससे ढँकते, दूसरों को पहनने के लिए देते, बाहर जाते हुए इसे दूसरों को पहनते आदि देखता है। परन्तु प्रश्न उठता है कि साझी गतिविधि से किसी अवधारणा को समझने का यह नियम पढ़ने या सुनने से किसी अवधारणा को समझने पर कैसे लागू होता है? उदाहरण के लिए 'ग्रीक हेलमेट' जिसके साथ किसी तरह के उपयोग की बात

नहीं जुड़ी है। अमेरिका की खोज के बारे में किताबों से पढ़ने में भला किस तरह की साझी गतिविधि शामिल है?

चूँकि भाषा कई चीजों के बारे में सीखने का मुख्य माध्यम बन चुकी है, आइए हम यह देखते हैं कि यह कैसे काम करती है। बच्चा केवल आवाजों, आहटों और स्वर के साथ शुरुआत करता है, जिनका वास्तव में कोई अर्थ नहीं होता है और न ही ये किसी तरह के विचार को व्यक्त कर रहे होते हैं। ध्वनियाँ एक तरह के उत्प्रेरक का काम करती हैं और प्रतिक्रिया को संचालित करती हैं; जैसे कि कोई ध्वनि सुनने में अच्छी लगती है और कोई आपको चौंका सकती है। h-a-t यह ध्वनि तब तक उतनी ही अर्थहीन रहेगी जितना कि Choctaw भाषा की कोई ध्वनि, जब तक कि इसे अनेक लोगों द्वारा की जाने वाली किसी गतिविधि के सन्दर्भ में नहीं बोला जाता है। माँ जब बच्चे को बाहर घुमाने लेकर जा रही होती है तो वह बच्चे के सिर पर किसी वस्तु को रखते हुए 'hat' कहती है। बाहर घूमने जाना बच्चे को पसन्द होता है; माँ और बच्चा केवल भौतिक तौर पर एक दूसरे के साथ नहीं जा रहे होते हैं, बल्कि इस बाहर जाने में दोनों की रुचि होती है और वे साथ में इसका आनन्द लेते हैं। बाहर जाने की गतिविधि के दूसरे कारकों के साथ जुड़कर 'hat' की ध्वनि का बच्चे के लिए भी वही मतलब हो जाता है जो उसके माता-पिता के लिए होता है; यह उस गतिविधि का प्रतीक हो जाता है जिससे यह जुड़ा है। यह बात कि भाषा उन ध्वनियों से बनती है जिनके साझे मतलब होते हैं; यह समझाने के लिए काफी है कि इसका अर्थ साझे अनुभव के साथ सम्बन्ध पर निर्भर करता है।

संक्षेप में कहा जाए तो h-a-t की आवाज भी उसी तरह से अपना अर्थ ग्रहण करती है जैसा 'hat' वस्तु के रूप में, अर्थात एक दिए गए तरीके से उसके इस्तेमाल के द्वारा। और ये बच्चे के लिए भी वही मतलब ग्रहण कर लेते हैं जो वयस्कों के लिए होता है क्योंकि वे दोनों के द्वारा किसी साझे अनुभव में उपयोग में आते हैं। समान तरह से उपयोग होने की गारंटी इस बात से आती है कि वस्तु और ध्वनि को पहले बच्चे और वयस्क के बीच सक्रिय जुड़ाव बनाने के साधन के तौर पर एक संयुक्त गतिविधि से जोड़ा जाता है। समान विचार और अर्थ तभी निकल पाते हैं जब दोनों मनुष्य किसी गतिविधि में साझेदार होते हैं और एक का काम दूसरे के काम पर निर्भर या उसे प्रभावित करता है। यदि दो शिकारी किसी साझे शिकार की खोज में लगे हों और एक निश्चित संकेत का

मतलब बोलने वाले के लिए 'दाहिनी ओर मुड़ना' और सुनने वाले के लिए 'बाईं ओर जाना' हो तो यह तय है कि वे एक साथ शिकार नहीं कर पाएँगे। एक दूसरे को समझने का अर्थ है कि वस्तुओं, साथ ही ध्वनियों का किसी साझे काम के सन्दर्भ में दो लोगों के लिए एक ही मतलब होता हो।

जब एक बार किसी साझी गतिविधि के माध्यम से ध्वनियों का कोई अर्थ निकल रहा हो तब मिलती-जुलती ध्वनियों का उपयोग नए अर्थ को विकसित करने में किया जा सकता है, क्योंकि निश्चित रूप से जिन वस्तुओं के लिए वो होती हैं वे आपस में सम्बन्धित होती हैं। इस तरह से वे शब्द जिनसे बच्चा 'Greek helmet' को समझता है, वास्तव में वे समान रुचि और परिणामों वाले क्रियाकलापों में उपयोग में आने पर ही एक अर्थ ग्रहण करते (या समझे जाते) थे। अब वे शब्द सुनने या पढ़ने वाले के लिए हेलमेट के उपयोग सम्बन्धी गतिविधियों का काल्पनिक चित्रण कर उसका एक नया अर्थ देते हैं। इस समय के लिए वे लोग जो 'Greek helmet' शब्द के अर्थ को समझ रहे हैं, वे उसका उपयोग करने वाले लोगों के साथ मानसिक रूप से साझेदार होते हैं। अपनी कल्पना के स्तर पर वे एक साझी गतिविधि से जुड़े होते हैं। शब्दों के पूर्ण अर्थ को समझ पाना आसान नहीं है। अधिकतर लोग शायद इसी विचार पर आकर रुक जाते हैं कि यह ग्रीक (Greek) लोगों द्वारा सिर पर पहना जाने वाला एक खास तरह का 'helmet' होता है। इस तरह से हम कह सकते हैं कि विचारों को साझा करने और ग्रहण करने में भाषा का उपयोग 'साझी गतिविधि या अनुभव से अर्थ पाने के सिद्धान्त' का ही एक विस्तार है; यह किसी भी तरह से उस नियम का उल्लंघन नहीं करता है। जब तक शब्द प्रकट या मानसिक तौर पर कारक की तरह किसी साझी गतिविधि या अनुभव का हिस्सा नहीं होते, तब तक वे सिर्फ भौतिक उत्प्रेरक होते हैं जिनका कोई अर्थ या बौद्धिक मूल्य नहीं होता है। वे किसी गतिविधि को एक खास तरह से चलाने में काम आ सकते हैं परन्तु उसमें समझबूझ कर किया जाने वाला उद्देश्य या अर्थ नहीं होता है। जैसे– उदाहरण के लिए, जोड़ का निशान (+) कुछ नम्बरों को एक दूसरे के नीचे लिखकर उन्हें जोड़ने की तरफ इशारा करने के लिए उद्दीपक का काम कर सकता है, परन्तु जब तक इस काम में लगा व्यक्ति अपने काम का अर्थ नहीं समझता, तब तक वह केवल नम्बरों को जोड़ने वाली मशीन की तरह ही काम कर रहा होगा।

3. शैक्षिक तौर पर सामाजिक माध्यम

अब तक हमने समझा है कि सामाजिक वातावरण मनुष्यों के व्यवहार की मानसिक और भावनात्मक प्रवृत्तियों को बनाता है, जिसके लिए वातावरण उन्हें उद्देश्यपूर्ण और निश्चित परिणामों तक ले जाने वाले खास तरह के आवेगों को जन्म देने और मजबूत करने वाली गतिविधियों का हिस्सा बनाता है। संगीतकारों के परिवार में पलने वाले बच्चे के पास अनिवार्य रूप से संगीत में जो भी क्षमता होती है, वह अपेक्षाकृत अधिक उत्तेजित होती है, किन्हीं अन्य आवेगों की तुलना में जो किसी अन्य वातावरण में उत्तेजित हो सकती है। संगीत में रुचि लेना और उसमें निश्चित दक्षता पाना उसे अपने समूह में रहने में मदद करता है, क्योंकि इसके बिना वह समूह के दूसरे सदस्यों के जीवन में भागीदारी नहीं कर सकता है। व्यक्ति के लिए अपने से जुड़े हुए लोगों के जीवन में किसी तरह की भागीदारी अपरिहार्य है; इस सम्बन्ध में सामाजिक वातावरण बिना किसी निश्चित उद्देश्य के और अचेतन रूप से ही सिखाने या आकार देने का प्रभाव रखता है।

आदिम एवं जंगली समुदायों में ऐसी सीधी भागीदारी ही (जिस अपरोक्ष या प्रासंगिक शिक्षण की हमने अभी बात की थी) बच्चों के पालन-पोषण और उन्हें समूह की प्रथाओं और विश्वासों को अपनाने के लिए, लगभग एकमात्र उपलब्ध प्रभाव होता है। यहाँ तक कि आधुनिक समाजों में बहुत अभ्यास से शिक्षित किए गए नए लोगों के पालन-पोषण का बुनियादी आधार भी यही है। समूह की रुचियों और पेशे के अनुसार कुछ बातें अधिक सम्मानजनक और कुछ खराब मानी जाने लगती हैं। केवल साहचर्य अपने-आप में आवेगों या पसन्द-नापसन्दगी को जन्म नहीं देता है, परन्तु वह ऐसी चीजों को जुटाता है, जिससे सदस्य खुद को जोड़ते हैं। हमारे समूह या कक्षा के काम करने का तरीका तय करता है कि किन चीजों पर ध्यान दिया जाएगा, और इस तरह से यह अवलोकन तथा याददाश्त की दिशाओं और सीमाओं को भी निर्धारित करता है। जो कुछ भी अपरिचित और अलग (कहा जाए कि समूह की गतिविधि से बाहर) होता है उसे नैतिक तौर पर वर्जित और बौद्धिक रूप से सन्देहास्पद माना जाने लगता है। हमें यह अविश्वसनीय लग सकता है कि जिन विषयों को हम आज बहुत अच्छी तरह से जानते हैं, उनको पुराने समय में पहचाना ही नहीं गया था। इसलिए हमें यह लगता है कि हमारी पहले की पीढ़ियाँ कम समझदार होती थीं और हम खुद को बौद्धिक तौर पर उनसे बेहतर मानकर चलते हैं।

हालाँकि इसका कारण यह है कि उनकी जीवनशैली में उन बातों पर ध्यान देने की ज़रूरत ही नहीं थी, बल्कि उनका ध्यान कुछ दूसरी चीजों पर होता था। जिस तरह हमारे संवेदी अंगों को उत्तेजित करने के लिए उनसे सम्बन्धित चीजों की ज़रूरत पड़ती है, उसी तरह हमारी देखने, याद रखने और कल्पना करने की क्षमताएँ अचानक ही काम नहीं करती हैं, बल्कि ये सभी हमारे वर्तमान व्यवसाय की जरूरत के अनुसार संचालित होती हैं। हमारे स्वभाव का मुख्य हिस्सा विद्यालयी-शिक्षा से अलग ऐसे ही प्रभावों से बनता है। साभिप्राय या सुविचारित शिक्षण अधिक-से-अधिक यह कर सकता है कि वह इन क्षमताओं को स्वतंत्र करे और उन्हें अधिक विकसित करे, उनकी स्थूलता को साफ करे, और ऐसी सामग्री उपलब्ध कराए जो उनकी गतिविधि को अर्थ के लिहाज से अधिक सार्थक बनाती हो।

चूँकि 'वातावरण का अचेतन प्रभाव' इतना बारीक और व्यापक होता है कि यह व्यवहार और मस्तिष्क के हर पहलू पर प्रभाव डालता है। अतः इससे सबसे प्रभावित होने वाली कुछ दिशाओं को चिह्नित करना उपयोगी हो सकता है। सर्वप्रथम, भाषा की आदतें। भाषण के मौलिक तरीके, शब्दावली, जीवन में साधारण बोलचाल के दौरान विकसित होते हैं और ये किसी तयशुदा ढाँचे के तहत नहीं बल्कि सामाजिक जरूरत की वजह से जारी रहते हैं। जैसा कि हम कहते हैं कि बच्चा अपनी मातृभाषा को सीख लेता है। यद्यपि बोलने सम्बन्धी आदतें ग्रहण की जाती हैं और उन्हें सचेतन शिक्षण के माध्यम से सुधारा या बदला जा सकता है, परन्तु आवेश की दशा में व्यक्ति अकसर बोलचाल के सीखे हुए तरीकों को भुलाकर अपनी वास्तविक मूल भाषा में आ जाता है। दूसरा, तौर-तरीके हैं। उदाहरण उपदेश से अधिक प्रभावशाली होता है। जैसा कि कहा जाता है कि अच्छे तौर-तरीके बेहतर परवरिश से आते हैं या यूँ कहें कि अच्छे तौर-तरीकों का मतलब ही बेहतर परवरिश है; और परवरिश सूचनाएँ देते हुए नहीं बल्कि स्वाभाविक प्रेरकों की प्रतिक्रिया में होने वाली गतिविधियों के दौरान होती है। सचेतन रूप से किए गए सुधार और निर्देशों के बावजूद आसपास का माहौल और उसका भाव ही तौर-तरीकों को बनाने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। और तौर-तरीके लघु नैतिकताएँ होती हैं। इसके अलावा, मुख्य नैतिकताओं के सन्दर्भ में सचेतन निर्देश केवल उसी हद तक प्रभावशाली होते हैं जिस हद तक बच्चे के सामाजिक वातावरण को बनाने वाले लोगों के सामान्य 'क्रियाकलापों और बातचीत' के बीच तालमेल होता है। तीसरा, अच्छी सुरुचि (taste) और सौन्दर्यात्मक सराहना। यदि

आँखों का लगातार सामंजस्यपूर्ण वस्तुओं द्वारा अभिवादन किया जाता है, तो रूप और रंग के लावण्य होने से सुरुचि का मानक स्वाभाविक रूप से बढ़ता है। एक चमकीला, अव्यवस्थित और भड़कीला वातावरण सुरुचि को बिगाड़ने का काम करता है, वैसे ही जैसे शीर्ण और बंजर परिवेश सुन्दरता की इच्छा को समाप्त कर देते हैं। इस तरह की विपरीत स्थितियों में सचेतन शिक्षण अधिक-से-अधिक इस बारे में दूसरों के विचारों की जानकारी देने से अधिक शायद ही कुछ कर सकता है। इस तरह की सुरुचि कभी भी सहज और व्यक्तिगत तौर पर आरोपित नहीं हो पाती, बल्कि अस्वाभाविक रूप से हर बार यह याद करने की क्रिया बन जाती है कि किसी वस्तु को सिखाए गए तरीके से किस तरह देखा जाए। तो, कहा जा सकता है कि मनुष्य की वे परिस्थितियाँ ही, जिनमें वह आदतन रहता है, उसमें मूल्यों का निर्णय करने वाले गहन मानकों को विकसित करती हैं, हालाँकि इसे चौथा बिन्दु कहने का अधिक मतलब नहीं है क्योंकि यह पहले से कहे गए बिन्दुओं का ही संयोजन है। हम मुश्किल से ही कभी पहचान पाते हैं कि किस सीमा तक हम सोच-समझकर किसी बात का अच्छा या बुरा होना तय करते हैं, वह दरअसल उन मानकों के आधार पर होता है जिनके प्रति हम बिलकुल भी सजग नहीं हैं। परन्तु सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि जिन बातों को हम बिना जाँचे या सोचे-विचारे, बिना प्रमाण के सही मान लेते हैं, वे वास्तव में वही बातें होती हैं जो हमारी सचेतन विचार प्रक्रिया का निर्धारण करती हैं और हमारे निर्णयों को तय करती हैं। और ये आदतें जो चिन्तन के स्तर के नीचे रहती हैं, ये वही होती हैं जो दूसरों के साथ लगातार लेन-देन के रिश्तों के दौरान गठित हो गई हैं।

4. विद्यालय एक खास वातावरण के तौर पर

जाने-अनजाने होने वाली शैक्षिक प्रक्रिया के इस पूर्वगामी कथन का मुख्य महत्त्व हमें इस बात पर ध्यान दिलाना है कि वयस्कों द्वारा उनके वातावरण– जिसमें वे कर्म करते हैं और इसलिए सोचते और महसूस करते हैं– का नियंत्रण ही वह एकमात्र तरीका है जिससे वयस्क अपरिपक्व सदस्यों द्वारा हासिल की जाने वाली शिक्षा के प्रकार को नियंत्रित करते हैं। हम कभी भी प्रत्यक्ष रूप से नहीं, बल्कि वातावरण के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षित होते हैं। इस बात से बहुत अन्तर पड़ता है कि हम संयोगवश मिले वातावरण को शिक्षित करने देंगे या उद्देश्य के अनुरूप वातावरण की रचना करेंगे। कोई भी वातावरण

तब तक एक संयोगवश मिला वातावरण ही होता है, जब तक कि उसके शैक्षिक प्रभाव के बारे में चिन्तन न किया जाए और शैक्षिक असर के सन्दर्भ में उसे एक खास तरह से नियमित न किया जाए। एक समझदार घर किसी नासमझ घर से मुख्यतः इस मायने में अलग होता है कि वहाँ जीवनशैली और पारस्परिक व्यवहार का चुनाव, या कहें कि कम-से-कम उनमें परिवर्तन, बच्चों के विकास पर पड़ने वाले उनके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। परन्तु विद्‌यालय निस्सन्देह ऐसे वातावरणों का विशिष्ट उदाहरण है जिसका गठन जाहिर तौर पर अपने सदस्यों की मानसिक और नैतिक प्रवृत्तियों को प्रभावित करने के सन्दर्भ में होता है।

मोटे तौर पर कहा जाए तो, ये तब अस्तित्व में आते हैं जब सामाजिक परम्पराएँ इतनी जटिल हों कि सामाजिक ज्ञान भण्डार का काफी बड़ा हिस्सा लेखन-बद्‌ध हो और लिखित प्रतीकों के माध्यम से हस्तान्तरित होता हो। लिखित प्रतीक मौखिक भाषा से अधिक पारम्परिक या कृत्रिम होते हैं; उन्हें दूसरों के साथ आकस्मिक पारस्परिक व्यवहार के द्‌वारा नहीं सीखा जा सकता है। इसके अलावा, लिखित शैली का झुकाव तुलनात्मक रूप से ऐसे मुद्‌दों को चुनने और दर्ज करने की तरफ होता है जो कि रोजमर्रा की जिन्दगी से भिन्न होते हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचित होने वाली उपलब्धियाँ तब भी इसमें जमा होती हैं, जबकि उनमें से कुछ अस्थाई तौर पर प्रयोग से बाहर हो चुकी हों। नतीजतन, जैसे ही एक समुदाय उन बातों पर काफी हद तक निर्भर करने लगता है जो उसके अपने क्षेत्र और तात्कालिक पीढ़ी से परे हों, तो उसे अपने सभी संसाधनों के पर्याप्त फैलाव को सुनिश्चित करने के लिए स्कूलों की औपचारिक संस्था पर निर्भर होना पड़ता है। एक स्पष्ट उदाहरण लें तो प्राचीन ग्रीक और रोमन लोगों के जीवन ने हमारी अपनी जिन्दगी को काफी गहराई तक प्रभावित किया है, परन्तु फिर भी जिस तरीके से वे हमें प्रभावित करते हैं वह हमारे सामान्य अनुभवों का हिस्सा नहीं है। इसी तरह से, दूरदराज की जगहों पर रहने वाले ब्रिटिश, जर्मन, इटालियन लोग हमारे अपने सामाजिक सरोकार से सीधे तौर पर जुड़ते हैं, परन्तु स्पष्ट विवरण और ध्यान दिए बिना पारस्परिक व्यवहार की प्रकृति को नहीं समझा जा सकता है। ठीक इसी तरह से, हमारी दैनिक साहचर्य पर यह भरोसा नहीं किया जा सकता कि वह हमारी गतिविधियों पर दूरदराज की भौतिक शक्ति और अस्पष्ट संरचनाओं की भूमिका को नई पीढ़ी के सामने स्पष्ट कर सकते हैं।

इसीलिए इस तरह के मामलों की देखरेख के लिए सामाजिक पारस्परिक व्यवहार की एक विशेष प्रणाली, अर्थात विद्यालय की शुरुआत की गई।
यह उल्लेखनीय है कि जीवन के साधारण साहचर्यों की तुलना में इस तरह की संस्था के पर्याप्त रूप से भिन्न तीन कार्य हैं। पहला, एक मिश्रित सभ्यता पूरी तरह से आत्मसात करने के लिहाज से बहुत जटिल होती है। इसे टुकड़ों में, जैसी यह पहले थी, तोड़कर धीरे-धीरे और क्रमबद्ध तरीके से आत्मसात किया जाना चाहिए। हमारे वर्तमान सामाजिक जीवन के सम्बन्ध इतने अधिक और इतने गुँथे हुए हैं कि सबसे अनुकूल स्थिति में पल रहा बच्चा भी आसानी से उनमें से कई महत्त्वपूर्ण सम्बन्धों को साझा नहीं कर सकता था। उन्हें साझा न करने पर उनके अर्थ बच्चे तक नहीं पहुँचेंगे, और उसकी मानसिक प्रवृत्ति का हिस्सा नहीं बन पाएँगे। अर्थात उनकी बहुतायत बच्चे को उनकी बारीकियाँ समझने का अवसर नहीं देगी। व्यापार, राजनीति, कला, विज्ञान, धर्म ये सभी एक साथ ही ध्यान देने की माँग करेंगे; और जिसका नतीजा उलझन होगा। सामाजिक संस्था का, जिसे हम विद्यालय कहते हैं, पहला काम एक सरल वातावरण उपलब्ध कराना है। यह उन विशेषताओं को चुनता है जो पर्याप्त हद तक बुनियादी होती हैं और नए लोगों द्वारा प्रतिक्रिया करने के उपयुक्त होती हैं। उसके बाद यह पहले अर्जित किए गए साधनों का उपयोग अधिक जटिलता को समझने के माध्यम के तौर पर करता है और इस तरह एक विकासशील क्रम का निर्माण करता है।

दूसरी बात, यह विद्यालय के वातावरण का सरोकार है कि वह मौजूदा वातावरण के अनुपयुक्त लक्षणों के मानसिक प्रवृत्ति पर पड़ने वाले असर को, जहाँ तक सम्भव हो, दूर करे। यह क्रियाकलाप हेतु एक विशुद्ध वातावरण को स्थापित करता है। इसमें चयन का उद्देश्य केवल सरलीकरण नहीं बल्कि अवांछनीय को हटाना भी है। हर समाज तुच्छ, अतीत के साथ अनुपयोगी, और निश्चित तौर पर खराब चीजों से जूझता है। यह विद्यालय का कर्तव्य है कि वह अपने द्वारा मुहैया कराए जाने वाले वातावरण से ऐसी बातों को निकाल दे और इस तरह से वह सामान्य सामाजिक वातावरण में उनके प्रभावों को रोकने का काम कर सकता है। इस तरह से अपने विशिष्ट प्रयोग के लिए सर्वश्रेष्ठ का चयन करके विद्यालय इस सबसे अच्छे के प्रभाव को अधिक मजबूत करने की कोशिश करता है। जैसे-जैसे एक समाज अधिक प्रबुद्ध होता है, उसे अहसास होता है कि वह अपनी सम्पूर्ण मौजूदा उपलब्धियों को संरक्षित करने और उन्हें आगे सौंपने के लिए

जिम्मेदार नहीं है, बल्कि उसकी जिम्मेदारी है कि भविष्य के एक बेहतर समाज के निर्माण के लिए आवश्यक उपलब्धियों को ही आगे हस्तान्तरित करे। इस उद्देश्य को हासिल करने के लिए विद्यालय उसकी मुख्य संस्था है।

तीसरी बात, यह विद्यालय का कर्तव्य है कि वह सामाजिक वातावरण के विभिन्न तत्त्वों को सन्तुलित करे और ध्यान में रखे कि हर व्यक्ति को अपने जन्मजात सामाजिक समूह की सीमाओं से बाहर निकलने और एक व्यापक वातावरण के सजीव सम्पर्क में रहने का अवसर प्राप्त हो सके। ऐसे शब्द जैसे 'समाज' और 'समुदाय' भ्रामक होंगे, यदि ये हमें यह सोचने पर बाध्य करते हैं कि ये शब्द केवल एक वस्तु को ही बताते हैं। वास्तव में देखा जाए तो एक आधुनिक समाज में कई समाज अधिक या कम तौर पर एक दूसरे से जुड़े होते हैं। हर घर अपने करीबी मित्रों के विस्तार के साथ एक समाज बनाता है; सड़क या गाँव के साथियों का समूह एक समुदाय है; और हर व्यापारिक समूह, हर क्लब एक दूसरा समुदाय है। इन अधिक करीबी समूहों से परे जाने पर हमारे अपने देश की तरह, विभिन्न प्रजाति, धार्मिक जुड़ाव, और आर्थिक वर्गों से मिलकर बना, देश होता है। आधुनिक शहर में नाममात्र की राजनैतिक एकता के बावजूद सम्भवतः पुराने युग के महाद्वीप की तुलना में कहीं ज्यादा समुदाय, अधिक भिन्न रीति-रिवाज, परम्पराएँ, आकांक्षाएँ, सरकार या नियंत्रण के प्रकार होते हैं।

ऐसा हर समूह अपने सदस्यों के सक्रिय व्यवहार पर एक संरचनात्मक प्रभाव डालता है। एक गुट, एक क्लब, फ़ेगिन (चार्ल्स डिकेंस के उपन्यास का एक पात्र) के चोरों का समूह, किसी जेल में कैदी आदि सभी अपने सामूहिक या संयुक्त गतिविधियों में दाखिल होने वाले लोगों को उसी तरह का वास्तविक शैक्षिक वातावरण प्रदान करते हैं, जैसा एक चर्च, एक मजदूर संगठन, एक व्यापारिक साझेदार या एक राजनैतिक पार्टी करती है। उनमें से हर एक लगभग उसी तरह से सम्मिलित होने या साझे जीवन का तरीका है जैसा एक परिवार, एक शहर या एक राज्य होता है। ऐसे भी समुदाय हैं जिनके सदस्यों के बीच एक दूसरे से सीधा सम्पर्क बहुत कम या नहीं होता है, जैसे– कलाकारों का संघ, रिपब्लिक ऑफ लेटर्स (यूरोप और अमरीका में 17वीं और 18वीं शताब्दी के अन्त में चिट्ठियों से जुड़ा बौद्धिक समुदाय), पेशेवर रूप से शिक्षित वर्ग के लोग जो धरती पर

हर जगह फैले हैं। चूँकि उनके लक्ष्य समान हैं तो हर सदस्य की गतिविधि स्पष्ट रूप से दूसरों के द्वारा किए जाने वाले क्रियाकलाप की जानकारी से प्रभावित होती है।
पुराने समय में समूहों में विविधता मुख्यतः एक भौगोलिक मसला था। वहाँ कई समाज थे, परन्तु तुलनात्मक रूप से हर एक अपने इलाके के भीतर समरूप था। परन्तु व्यापार, परिवहन, सूचना, और प्रवास के विकास के साथ ही अलग-अलग परम्पराओं वाले विभिन्न लोगों के समूहों के मिलने से संयुक्त राज्य अमरीका जैसे देश बने। यही वह स्थिति है जिसने, किसी भी अन्य कारण से अधिक, एक शैक्षिक संस्थान की माँग के लिए मजबूर किया, जो नए सदस्यों को एक समान और सन्तुलित वातावरण जैसा कुछ उपलब्ध करा सके। केवल इसी तरीके से विभिन्न समूहों द्वारा एक-समान राजनैतिक इकाई के अन्दर साथ-साथ लगाए जा रहे अपकेन्द्री बल को कमजोर किया जा सकता है। विद्यालय में विभिन्न प्रजातियों, अलग धर्मों और असमान रिवाजों के नए सदस्यों का आपस में मिलना सभी के लिए एक नए और खुले वातावरण का निर्माण करता है। समान विषयवस्तु का होना लोगों को बृहद परिप्रेक्ष्य को एकीकृत नजरिए से देखने का अभ्यास कराता है; जो कि अपेक्षाकृत अलग-थलग रहे किसी समूह के सदस्यों में इस तरह से दिखाई नहीं पड़ता। अमरीकन पब्लिक स्कूलों की एकीकरण शक्ति, सामान्य और सन्तुलित विषयवस्तु की प्रभावशीलता का स्पष्ट प्रमाण है।

विद्यालय का यह भी एक कार्य होता है कि वह कई सामाजिक वातावरणों में प्रवेश करने से व्यक्ति के स्वभाव पर पड़ने वाले विभिन्न प्रभावों के मध्य समन्वय बनाए रखे। एक नियमसंग्रह परिवार में होता है; दूसरा सड़क पर; एक तीसरा किसी कार्यशाला या दुकान में होता है; तो चौथा किसी धार्मिक संगठन में। जब एक व्यक्ति एक वातावरण से दूसरे में जाता है, तब वह उनके विरोधी प्रभाव को झेलने के लिए विवश होता है; और उसके इस तरह से विभाजित होने की आशंका होती है कि वह विभिन्न अवसरों के लिए निर्णय और भावनाओं के अलग-अलग मानकों को अपनाने लग जाए। ऐसा खतरा विद्यालय पर एक नियमित और समेकित काम की जिम्मेदारी डाल देता है।

सारांश :

एक समाज के सतत और प्रगतिशील जीवन के लिए नए लोगों के नजरिए और व्यवहार में बदलाव आवश्यक है; जो कि मान्यताओं, भावनाओं, और ज्ञान के सीधे हस्तान्तरण से नहीं हो सकता है। यह वातावरण के माध्यम से होता है। वातावरण में वे सभी स्थितियाँ शामिल होती हैं जो किसी जीवित प्राणी के विशेष क्रियाकलापों के सम्पन्न होने से सम्बन्धित होती हैं। सामाजिक वातावरण उन सभी क्रियाकलापों से मिलकर बनता है जो उसके किसी सजीव के क्रियाकलापों के संचालन से सम्बन्धित होते हैं। सामाजिक वातावरण में साथी सदस्यों की सभी गतिविधियों शामिल होती हैं, जो कि हर सदस्य के क्रियाकलाप में जुड़ती रही होती हैं। इसका प्रभाव सही मायनों में उसी स्तर तक शैक्षणिक होता है जिस हद तक कोई व्यक्ति किसी सामूहिक गतिविधि में हिस्सा ले या भागीदारी निभाए। सामूहिक गतिविधि में भागीदारी करके व्यक्ति क्रियाकलाप को संचालित करने वाले उद्देश्य को अपनाता है, उसके तरीकों और विषयवस्तु से परिचित होता है, जरूरी कौशल प्राप्त करता है और उसके भावनात्मक सार को आत्मसात करता है।

जब नई पीढ़ी अपने विभिन्न समूहों की गतिविधियों में उत्तरोत्तर भाग लेती है तो अचेतन रूप से ही उसके स्वभाव का गहन और अधिक घनिष्ठ शैक्षणिक निर्माण होता है। यद्यपि, ज्यों ही एक समाज की जटिलता बढ़ती है तो विशेष तौर पर नई पीढ़ी की क्षमताओं को विकसित करने का ध्यान रखने वाले खास सामाजिक वातावरण को मुहैया कराना जरूरी हो जाता है। इस खास वातावरण के तीन अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य हैं : जिस तरह के व्यवहार को विकसित करना है उसके घटकों को सरल बनाना और क्रमबद्ध करना; मौजूदा सामाजिक रीति-रिवाजों को परिष्कृत करना और उन्हें आदर्श रूप में प्रस्तुत करना; नई पीढ़ी के लोगों के स्वतः प्रभावित होने की बजाय एक व्यापक और बेहतर सन्तुलित वातावरण का निर्माण करना जिससे नई पीढ़ी के लोग प्रभावित हो सकें।